ओ३म्

'दलित स्त्रियों के उत्थान में महर्षि दयानन्द का योगदान'

–मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून।

महर्षि दयानन्द ने अपने जीवनकाल में देश में सर्वांगीण क्रान्ति की थी। वर्णाश्रम व्यवस्था में आये प्रदुषण को उन्होंने दूर किया। उन्होंने समाज में व्यवहृत जन्मना वर्णाश्रम वा जाति–व्यवस्था के दोषों को वेदों, वैदिक साहित्य, युक्ति व तर्क के आधार पर व्यवहारिक रूप में प्रस्तुत किया जो महाभारतकाल से पूर्व वैदिक काल में रहा था। मध्यकाल में वैदिक धर्म में आयी मूर्तिपूजा, अवतारवाद, फलितज्योतिष, मृतक श्राद्ध, यज्ञों में पशुहिंसा, मानव बलि आदि अनेक बुराईयों की तरह वर्णाश्रम व्यवस्था में भी परिवर्तन व विकृतियां उत्पन्न हुईं। महर्षि दयानन्द ने वेदों के द्वारा प्रोक्त शूद्रों को ईश्वर वा पुरूष के पाद के समान होने के वेद

मन्त्र से अवगत कराते हुए बताया कि वेद के अनुसार ईश्वर वा पुरूष के शिर=ब्राह्मण, बाहु=क्षत्रिय, उदर=वैश्य व पाद=शूद्र के समान हैं। क्या कोई व्यक्ति अपने बाहू, उदर व पैरों का तिरस्कार कर इन्हें हेय मान सकता है? मानव शरीर के यह चारों भाग जीवन के प्रथम दिन से अन्तिम दिन तक सुसंगठित रहते हैं। यदि इनमें वैषम्य आता है तो शरीर रोगी होकर मृत्यु को प्राप्त होता है। **हमारा प्रश्न है कि क्या कोई ब्राह्मण कहलाने वाला व्यक्ति यह कह सकता है कि मेरा शिर श्रेष्ठ है और मेरे हाथ, उदर व पैर हेय व अस्पर्शय है?** वस्तुतः मध्यकाल में वर्णाश्रम व्यवस्था का जो स्वरूप परिवर्तन किया गया, उसमें बुद्धि को ताक पर रखकर कुछ अज्ञानी व स्वार्थी लोगों ने यह परिवर्तन व विकृतियां उत्पन्न कीं। यह आश्चर्य होता है कि सारा देश ही इस जन्मना जातिप्रथा का शिकार बन गया और हमारे दलित बन्धु इससे सर्वाधिक पीड़ित हुए। सदियों तक ऐसा होता रहा और किसी वैदिक सनातनधर्मी विद्वान व महात्मा ने इसका विरोध नहीं किया? वस्तुतः इसे मानवीय बुद्धि का बहुत बड़ा पतन कह सकते हैं। **महर्षि दयानन्द को इस बात का श्रेय है कि उन्होंने इस समस्या से जुड़े हर पहलू पर खुले हृदय से विचार किया, उसे भली प्रकार से समझा और इसमें स्वार्थी लोगों ने जो विकृतियां उत्पन्न कीं थीं, उसका संशोधन व परिमार्जन किया। उन्होंने अपने समय में वर्णाश्रम व्यवस्था के प्रभाव जानकर इसे ''मरण व्यवस्था'' बताया और कहा कि देखें कि इस डाकिनी से क्या हमारा व हमारे समाज का पीछा छूटता भी है या नहीं? यह प्रसन्नता की बात है कि आज वर्णाश्रम व्यवस्था पर महर्षि दयानन्द जी के तार्किक व समाज के हितकारी विचारों को हमारे देश के सभी लोगों ने स्वीकार कर लिया है। आज मध्यकालीन वर्णव्यवस्था व उसके मध्यकालीन स्वरूप का समर्थक शायद ही देश में कोई व्यक्ति हो? तथापि आज भी इसका प्रभाव समाप्त नहीं हुआ है।**

महर्षि दयानन्द ने दलित स्त्रियों के उद्धार के लिये क्या किया?, हम इस विषय पर विचार कर रहे हैं। महर्षि दयानन्द के सामने **''स्त्री शूद्रो नाधीयताम्''** सूक्ति का बहुत प्रयोग पण्डित लोग किया करते थे। इसका अर्थ है कि स्त्री और शूद्र न पढ़ें या इन्हें अध्ययन का अधिकार नहीं है। **महर्षि दयानन्द सत्यार्थप्रकाश के चौथे समुल्लास में इसका प्रतिवाद कर कहते हैं कि सब स्त्री और पुरुष अर्थात् मनुष्यमात्र को पढ़ने का अधिकार है।** तुम (पण्डितजन) कुवें में पड़ों और यह श्रुति तुम्हारी कपोलकल्पना से हुई है (वा मनघड़न्त है)। इसका तात्पर्य है कि यह सूक्ति किसी प्रमाणिक ग्रन्थ की रचना नहीं है। शायद इसी बात का प्रभाव रहा हो जिससे महर्षि दयानन्द को आर्यसमाज का एक नियम बनाना पड़ा कि **''अविद्या का नाश और विद्या की वृद्धि करनी चाहिये।''** महर्षि दयानन्द ने हजारों वर्ष से चली आ रही इस अन्यायपूर्ण मान्यता व सिद्धान्त, कि स्त्री व शूद्रों को पढ़ने का अधिकार नहीं है, का खण्डन कर सभी स्त्रियों व शूद्र बन्धुओं पर महान उपकार किया है जिससे इनके भविष्य में होने वाले शोषण व अन्याय से रक्षा हो सकी है।

महर्षि दयानन्द कहते हैं कि सब मनुष्यों के वेदादिशास्त्र पढ़ने सुनने के अधिकार का प्रमाण यजुर्वेद के छब्बीसवें अध्याय का दूसरा मन्त्र है। यह मन्त्र है **'यथेमां वाचं कल्याणीमावदानि जनेभ्यः। ब्रह्मराजन्याभ्यां शूद्राय चार्याय च स्वाय चारणाय।।'** मंत्र में परमेश्वर ने कहा है कि **(यथा) जैसे मैं (जनेभ्यः) सब मनुष्यों के लिये (इमाम्) इस (कल्याणीम्) कल्याण अर्थात् मनुष्यों को मुक्ति का सुख देने वाली (वाचम्) ऋग्वेदादि चारों वेदों की वाणी का (आवदानि) उपदेश करता हूं, वैसे तुम भी किया करो। वह इसी क्रम में लिखते हैं कि यहां कोई ऐसा प्रश्न करे कि जन शब्द में द्विजों का ग्रहण करना चाहिये, क्योंकि स्मृत्यादि ग्रन्थों में ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य ही के वेदों के पढ़ने का अधिकार लिखा**

है, स्त्री और शूद्रादि वर्णों का नहीं। इसका वह उत्तर देते हुए कहते हैं कि देखों परमेश्वर स्वयं कहता है कि हमने ब्राह्मण, क्षत्रिय (अर्य्याय) वैश्य (शूद्राय) शूद्र और (स्वाय) अपने भृत्य वा स्त्रियादि (अरणाय) और अतिशूद्रादि के लिये भी वेदों का प्रकाश किया है अर्थात् सब मनुष्य वेदों को पढ़–पढ़ा और सुन–सुनाकर, विज्ञान को बढ़ा के, अच्छी बातों का ग्रहण और बुरी बातों को त्यागकर, अनावश्यक दुःखों से छूट कर, आनन्द को प्राप्त हों। कहिये, अब तुम्हारी बात मानें वा परमेश्वर की। परमेश्वर की बात अवश्य माननीय है। इतने पर भी जो कोई इसको न मानेगा वह नास्तिक कहावेगा, क्योंकि **"नास्तिको वेदनिन्दकः"।** वेदों का निन्दक और न मानने वाला नास्तिक कहाता है। **क्या परमेश्वर शूद्रों का भला करना नहीं चाहता? क्या ईश्वर पक्षपाती है कि वेदों के पढ़ने–सुनने का शूद्रों के लिये निषेध और द्विजों के लिये विधि करे? जो परमेश्वर का अभिप्राय शूद्रादि के पढ़ाने–सुनाने का न होता तो इनके शरीर में वाक् और श्रोत्र इन्द्रिय क्यों रचता?** जैसे परमात्मा ने पृथिवी, जल, अग्नि, वायु, चन्द्र, सूर्य्य और अन्नादि पदार्थ सब के लिये बनाये हैं, वैसे ही वेद भी सबके लिये प्रकाशित किये हैं और जहां कहीं निषेध किया है, उस का यह अभिप्राय है कि जिसको पढ़ने–पढ़ाने से कुछ भी न आवे, वह निर्बुद्धि और मूर्ख होने से शूद्र कहलाते हैं। उसका पढ़ना–पढ़ाना व्यर्थ है। **महर्षि दयानन्द इसी क्रम में यह भी लिखते हैं कि जो स्त्रियों के पढ़ने का निषेध करते हो वह तुम्हारी मूर्खता, स्वार्थता और निर्बुद्धिता का प्रभाव है।**

महर्षि दयानन्द और पौराणिक परम्परा भी वेदों को परम प्रमाण मानती है। स्त्रियों को वेदों के अध्ययन का अधिकार है, इसका अन्य प्रमाण महर्षि दयानन्द ने सत्यार्थ प्रकाश में ही प्रस्तुत किया है जो कि अथर्ववेद का 3/24/11/18 मन्त्र है। इस मंत्र **"ब्रह्मचर्य्येण कन्या युवानं विन्दते पतिम्।"** का अर्थ है कि **जैसे लड़के ब्रह्मचर्य्य सेवन से पूर्ण विद्या और सुशिक्षा को प्राप्त होके युवती, विदुषी, अपने अनुकूल, प्रिय, सदृश स्त्रियों के साथ विवाह करते हैं, वैसे (कन्या) कुमारी (ब्रह्मचर्य्येण) ब्रह्मचर्य्य सेवन से वेदादिशास्त्रों को पढ़, पूर्णविद्या और उत्तम शिक्षा को प्राप्त युवती होके पूर्ण युवावस्था में अपने सदृश, प्रिय, विद्वान (युवानम्) पूर्ण युवावस्था युक्त पुरुष को (विन्दते) प्राप्त होवें। इसलिये स्त्रियों को भी ब्रह्मचर्य्य और विद्या का ग्रहण अवश्य करना चाहिये। महर्षि दयानन्द के इन वाक्यों से दलित स्त्रियों सभी स्त्रियों को अध्ययन वा वेदाध्ययन का पूर्ण अधिकार सिद्ध होता है। यह एक प्रकार से ईश्वरीय न्यायालय का अकाट्य निर्णय है जिसकी अवहेलना नहीं की जा सकती। इसकी उपेक्षा करने वाले ईश्वरीय न्याय व्यवस्था के दोषी व अपराधी सिद्ध होते हैं।**

महर्षि दयानन्द ने प्रश्न किया है कि क्या (सभी) स्त्री लोग भी वेदों को पढ़ें? इसका उत्तर वह लिखते हैं कि अवश्य, देखो श्रौतसूत्रादि में **"इमं मन्त्रं पत्नी पठेत्।"** लिखा है। अर्थात् स्त्री यज्ञ में इस मंत्र को पढ़े। जो वेदादिशास्त्रों को न पढ़ी हो तो यज्ञ में स्वरसहित मंत्रों का उच्चारण और संस्कृतभाषण कैसे कर सके? भारत वर्ष की स्त्रियों में भूषणरूप गार्गी आदि वेदादि शास्त्रों को पढ़के पूर्ण विदुषी हुई थीं, यह शतपथ ब्राह्मण में स्पष्ट लिखा है। भला जो पुरुष विद्वान और स्त्री अविदुषी और स्त्री विदुषी और पुरुष अविद्वान् हो तो नित्यप्रति घर में देवासुर संग्राम मचा रहे। फिर सुख कहां? इसलिये जो स्त्री न पढ़ें तो कन्याओं की पाठशाला में अध्यापिका क्यों कर हो सकें तथा राजकार्य न्यायाधीशत्वादि एवं गृहाश्रम का कार्य्य जो पति को स्त्री और स्त्री को पति द्वारा प्रसन्न रखना, घर के सब काम स्त्री के आधीन रहना, (यह सभी काम) बिना विद्या इत्यादि के अच्छे प्रकार कभी नहीं हो सकते। यहां महर्षि दयानन्द ने शतपथ ब्राह्मण से गार्गी का उदाहरण व प्रमाण देकर स्त्रियों को वेदाधिकार का वाद पौराणिक सनातनधर्मियों से जीत लिया है। महर्षि दयानन्द की यह भी विशेषता है कि उन्होंने अपने सिद्धान्त व मान्यतायें हिन्दी में लिखीं हैं जिसे पांचवी कक्षा तक हिन्दी पढ़ा व्यक्ति भी समझ सकता है और बड़े बड़े पण्डितों से मनवा सकता है और ऐसा ही हुआ भी है।

अपनी बात को प्रमाणित करने के लिए महर्षि दयानन्द ने अन्य उदाहरण देकर सभी वर्णों की स्त्रियों की उन्नति हेतु उपदेश भी किये हैं। वह कहते हैं कि देखो, आर्य्यावर्त्त के राजपुरुषों की स्त्रियां धनुर्वेद अर्थात् युद्धविद्या भी अच्छी प्रकार जानती थी, क्योंकि जो न जानती होती तो केकेयी आदि दशरथ आदि के साथ युद्ध में क्यों कर जा सकती? और युद्ध कर सकती? इसलिये ब्राह्मणी और क्षत्रिया को सब विद्या, वैश्या को व्यवहार विद्या, और शूद्रा को पाकादि व सेवा की विद्या अवश्य पढ़नी चाहिये। जैसे पुरुषों को व्याकरण, धर्म और अपने व्यवहार की विद्या न्यून से न्यून अवश्य पढ़नी चाहिये, वैसे स्त्रियों को भी व्याकरण, धर्म, वैद्यक, गणित, शिल्प विद्या तो अवश्य ही सीखनी चाहिये। **क्योंकि इनके सीखे बिना सत्यासत्य का निर्णय, पति आदि से अनुकूल वर्त्तमान यथायोग्य सन्तानोत्पत्ति, उन का पालन, वर्धन और सुशिक्षा**

करना, घर के सब कार्य्यों को जैसा चाहिये वैसा करना कराना, वैद्यकविद्या से औषधवत् अन्न–पान बना और बनवाना नहीं कर सकती। जिससे घर में रोग कभी न आवें और सब लोग आनन्दित रहें। शिल्पविद्या के जाने बिना घर का बनवाना, वस्त्र–आभूषण आदि का बनाना व बनवाना, गणितविद्या के बिना सब का हिसाब समझना–समझाना, वेदादिशास्त्रविद्या के बिना ईश्वर और धर्म को न जान के अधर्म से कभी नहीं बच सके। इसलिये वे ही (स्त्रियां) धन्यवादार्ह और कृतकृत्य हैं कि **जो अपने सन्तानों को ब्रह्मचर्य, उत्तम शिक्षा और विद्या से शरीर और आत्मा के पूर्ण बल को बढ़ावें। जिससे वे सन्तान मातृ, पितृ, पति, सासु, श्वसुर, राजा, प्रजा, पड़ोसी, इष्ट, मित्र और सन्तानादि से यथायोग्य धर्म से वर्त्ते। यही कोष अक्षय है। इसको जितना व्यय करें, उतना ही बढ़ता जाये। अन्य सब कोश व्यय करने से घट जाते हैं और दायभागी भी निज भाग लेते हैं और विद्याकोश का चोर वा दायभागी कोई भी नहीं हो सकता।** इस कोश की रक्षा और वृद्धि करने वाला विशेष राजा और प्रजा भी हैं।

सभी शूद्र स्त्री व पुरूषों को वेदों का अधिकार मिल जाने से ब्राह्मणों का एकाधिकार समाप्त होता है। सभी शूद्र कहाने वाले बन्धु ब्राह्मणों की स्थिति में आ जाते हैं। अब जो अधिक ज्ञान प्राप्त कर सकेगा वही समाज में अधिक प्रतिष्ठित होगा चाहे वह ब्राह्मण सन्तान हो या शूद्र–सन्तान। किसी के साथ पक्षपात नहीं होगा। यहां यह उल्लेख कर दें कि महर्षि दयानन्द ने सत्यार्थ प्रकाश में सभी वर्णों के बालकों के लिए एक समान, निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा की वकालत की है। वह लिखते हैं कि राजपुत्र व निर्धन व्यक्ति के पुत्र के साथ समान व्यवहार हो। इस प्रकार से शिक्षा में वह सभी को समानता का दर्जा देते हैं जिससे पक्षपात का प्रश्न ही नहीं होता। आर्य समाज ने अपने गुरूकुलों में यह अधिकार निष्पक्ष रूप से दलितों सहित सभी लोगों को प्रदान किया है व आज भी किये हुए है। इस कारण अनेक शूद्र भाई व बहिनें वेदों के बड़े बड़े पण्डित–पण्डिता बनीं हैं।

अब हम महर्षि दयानन्द जी के कुछ क्रियात्मक कार्यों का उल्लेख करते हैं। बहुत से लोग ऐसे होते हैं कि जो वाणी से तो समर्थन करते हैं परन्तु अपने आचरण व क्रिया में वैसा नहीं करते। महर्षि दयानन्द का जीवन ऐसा नहीं है। वह जो कहते व मानते उसे करके दिखाते हैं। महर्षि दयानन्द सन् 1875 में पूना गये और वहां उन्होंने लगभग 50 से अधिक उपेदश दिये। इन उपदेशों में वहां के कई समाज सुधारक उपस्थित होते थे जिनमें से एक थे **श्री ज्योतिबा फूले (1827–1890)**। 1 जनवरी 1848 को आपने पुणे में एक कन्या पाठशाला खोली थी। आधुनिक भारत के इतिहास में कन्या पाठशाला स्थापित करने वाले आप ही पहले भारतीय थे। इसलिये उन्हें **'भारतीय स्त्री–शिक्षा का जनक'** कहा जाता है। भारतीय स्त्री को सर्वविध दासता से मुक्त कराने के लिए वे हमेशा संघर्षरत रहे। विधवा–विवाह एवं अन्तरर्जातीय विवाह के भी वे समर्थक थे। पाखण्ड एवं जातीयता के वे कट्टर विरोधी और शराब बन्दी के पक्षधर थे। **महात्मा फूले स्वामी दयानन्द जी द्वारा दिये 50 से अधिक व्याख्यानों में अतिवृष्टि के दिनों में अपवाद को छोड़कर अपने सत्यशोधक समाज के सदस्यों के साथ व्याख्यान में उपस्थित रहे थे। महर्षि दयानन्द की प्रगतिशील विचारधारा से प्रभावित होकर उन्होंने शुक्रवार 16 जुलाई, 1875 को सायं सात बजे अपनी मोमिनपुरा में स्थित शूद्रातिशूद्रों की पाठशाला में महर्षि का वेद–प्रवचन आयोजित किया था।** यद्यपि इस व्याख्यान में कहे शब्द उपलब्ध नहीं है परन्तु अनुमान से कह सकते हैं कि महर्षि दयानन्द ने कन्याओं की शिक्षा का महत्व, सभी मनुष्यों वा स्त्री–पुरूषों की समानता, श्रेष्ठ गुण–कर्म–स्वभाव का संक्षिप्त परिचय, छुआछूत मानवता पर कलंक, इतिहास प्रसिद्ध शिक्षित भारतीय नारियों गार्गी, अनुसूया, मदालसा, सीता आदि का उल्लेख, ब्रह्मचर्य पालन, बालविवाह की हानियों, पूर्ण युवावस्था में विवाह, वेदों का महत्व, रूढ़ियों व कुरीतियों का खण्डन, शिक्षित माता की सन्तान को सुशिक्षित करने में भूमिका, शिक्षित महिला का शिक्षित पति से सौहार्दपूर्ण व्यवहार, वेद विद्या में अनन्त आनन्द जैसे विषयों की चर्चा की होगी। **एकेश्वरवाद, शूद्रातिशूद्रों और स्त्रियों की शिक्षा इत्यादि विषयों में महर्षि से वैचारिक ऐक्य होने के कारण और रूढ़िवादियों के साथ संगठित शक्ति के रूप में मुकाबला करने के लिए महात्मा फुले अपने अनुयायियों के साथ महर्षि के पुणे–प्रवचनों और शोभायात्रा में सदल–बल शामिल हुए थे। महर्षि दयानन्द जी ने 1867 में कर्णवास में हंसादेवी ठाकुर को 'गायत्री मन्त्र' का अधिकार प्रदान किया था। मुम्बई के फोटोग्राफर हरिश्चन्द्र चिन्तामणि के सुपुत्र का यज्ञोपवीत संस्कार सन् 1876 में महर्षि की उपस्थिति में सम्पन्न हुआ था। महाराष्ट्रीय विदुषी पण्डिता रमाबाई को महर्षि ने सन् 1880 में न्याय और वेशेषिक दर्शन के सूत्र इस आशा के साथ पढ़ाये थे कि––यह देवी शास्त्रज्ञ बनकर भारतीय महिला वर्ग की उन्नति में अपना योगदान कर सकेगी। उन्होंने पण्डिता रमा बाई को परोपकार के लिए अपना जीवन उत्सर्ग करने के प्रबल प्रेरणा भी दी थी।** लेखन द्वारा महर्षि दयानन्द ने स्त्रियों की शिक्षा पर सत्यार्थ प्रकाश में जो कहा है, उसका वर्णन हम पूर्व ही कर चुके हैं। इस प्रकार हम देखते है कि **महर्षि ने ज्योतिबा फूले की शूद्रातिशूद्र कन्याओं की पाठशाला में वेद प्रचचन करके ऐतिहासिक कार्य किया।** यह स्मरणीय है कि मध्यकाल में स्त्रियों व शूद्रों के वेदमन्त्र का उच्चारण करने व सुन लेने मात्र पर कठोर अमानवीय दण्ड का प्रावधान था। यहां महर्षि स्वयं ही कन्याओं को वेदमन्त्रों का उच्चारण कर उन में निहित शिक्षाओं से उन्हें परिचित करा रहे थे। महर्षि दयानन्द का यह कार्य भी दलित स्त्रियों के उद्धार व उत्थान में एक प्रेरणादायक कार्य था जिसने

पौराणिकों को इस विषय में सोचने पर मजबूर किया था और बाद के दिनों में हम देखते हैं कि पौराणिकों ने अपनी पूर्व प्रतिज्ञाओं का पूर्णतः त्याग कर दिया।

यहां हम इस बात का भी उल्लेख करना चाहते हैं कि **महर्षि दयानन्द ने सभी कन्याओं को ब्रह्मचर्य व्रत धारण कर वेदाध्ययन का अधिकार दिया है।** वेदाध्ययन के लिए वेदारम्भ व उपनयन संस्कार होना आवश्यक है। इस संस्कार से ब्रह्मारी व ब्रह्मचारिणी द्विज बनते हैं। द्विज बालिका व बालक दलित व शूद्र नहीं होते। अतः अपने आप में यह सभी ब्रह्मचारिणियों की प्रगति का प्रमाण है। महर्षि दयानन्द व उनके अनुयायियों ने गुरूकुल खोलकर महर्षि दयानन्द के स्वप्नों को साकार किया है। आज आर्यसमाज द्वारा बड़ी संख्या में कन्याओं के गुरूकुल चलाये जा रहे हैं जहां सभी वर्णों की कन्यायें बिना किसी भेदभाव के वेदारम्भ व उपनयन संस्कार कराकर वेदाध्ययन करती हैं और द्विजत्व को धारण करती है। आर्यजगत की वेदविदुषी सूर्यादेवी चतुर्वेदालंकृता कई धार्मिक विषयों पर निर्णय के लिए वेदविरूद्ध घोषणा करने वाले शंकराचार्य आदि विद्वानों को संस्कृत में शास्त्रार्थ करने की चुनौती दे चुकी हैं। **अतः महर्षि दयानन्द ने दलित व सभी वर्णों की नारियों को वेदविदुषी बनाकर इतिहास में नई परम्परा को जन्म दिया जो आज भी सफलतापूर्वक चल रही है।** महर्षि दयानन्द विवाह में जन्मना जाति के पक्षधर न होकर गुण–कर्म–स्वभाव की समानता के पक्षधर थे। जिससे देश से जातिवाद की हानिकारक समस्या का समाधान होता है। उनका यह प्रयास भी फलीभूत हुआ है और आज गुण–कर्म–स्वभाव पर आधारित विवाह बड़ी संख्या में समाज में प्रचलित हो चुके हैं। इसमें कहीं न कहीं महर्षि दयानन्द की प्रेरणा कार्य कर रही है।

स्त्री शिक्षार्थ महर्षि दयानन्द का क्रियात्मक रूप उनके जीवनकाल में फीरोजपुर व मेरठ में उनकी प्रेरणा से स्थापित कन्या पाठशालायें हैं। महर्षि दयानन्द के अनुयायियों ने उनसे प्रेरणा ग्रहण कर उनके विचारों व सिद्धान्तों के अनुरूप जालन्धर में सन् 1886 में एक जनाना स्कूल नाम से स्कूल खोला था। सन् 1891 के जुलाई मास में आर्यसमाज की ओर से विधिपूर्वक पुनः नई कन्या पाठशाला का उद्घाटन हुआ। बड़ा यज्ञ किया गया। महात्मा मुन्शीराम, परवर्ती नाम स्वामी श्रद्धानन्द, ने प्रार्थना की और लाला देवराज जी ने धनसंग्रह के लिए अभ्यर्थना की। इस तरह उस विशाल कन्या महाविद्यालय की स्थापना हुई जिसने थोड़े ही समय वर्षों में आशातीत उन्नति की। जिस प्रकार डी.ए.वी. स्कूल की स्थापना ने देश भर में आर्यसमाजों में बालक शिक्षा के लिए बलवती प्रेरणा उत्पन्न की उसी प्रकार जालन्धर के कन्या महाविद्यालय ने देशभर में आर्यजनों का ध्यान कन्याओं की शिक्षा की ओर आकृष्ट किया जिसके परिणामस्वरूप थोड़े ही समय में अनेक कन्या विद्यालय स्थापित हो गये। जालन्धर का यह कन्या विद्यालय जालन्धर शहर की देश भर में प्रसिद्धि का कारण बना जिसकी स्वीकारोक्ति में सन् 1916 में पंजाब के लेफिटनैण्ट गवर्नर सर माइकल ओड्वायर ने सम्मति पुस्तक में लिखा था कि जालन्धर कोई ऐतिहासिक स्थान नहीं है लेकिन कन्या महाविद्यालय ने इसे देशभर में मशहूर कर दिया। इस कन्या महाविद्यालय की स्थापना एवं संचालन में सबसे अधिक योग महर्षि दयाननद और आर्यसमाज के अनुयायी लाला देवराज जी का था। हम यहां यह कहना चाहते हैं कि महर्षि दयानन्द व आर्यसमाज क्योंकि जन्मना जातिवाद और छुआछूत में विश्वास नहीं रखता था, अतः उनके द्वारा स्त्रियों की शिक्षा के लिए स्थापित विद्यालयों का लाभ समान रूप से दलित वर्ग की महिलाओं को भी प्राप्त हुआ। आर्यसमाज जिन–जिन पाठशालाओं व विद्यालयों की स्थापना करता था उनके संस्थापक व कर्ताधर्ता सभी दलितोद्धार का कार्य करने वाले लोग ही होते थे। **इतिहासकार पं. इन्द्र विद्यावाचस्पति ने लिखा है कि शीघ्र ही कन्याओं को शिक्षा देने का उत्साह देश भर के आर्यजनों में फैल गया। संयुक्त प्रान्त (उत्तर प्रदेश) में भी प्रायः सभी बड़े–बड़े नगरों की आर्यसमाजों के साथ कन्या पाठशालायें स्थापित हो गई। देहरादून, सहारनपुर, रूड़की, मुजफ्फरनगर, मथुरा, मैनपुरी, शाहजहांपुर, पीलीभीत, इटावा, प्रयाग, झांसी, बनारस, लखनऊ, दिल्ली आदि बड़े शहरों और अनेक कस्बों और गांवों में भी पाठशालायें खुलने के समाचार पुराने आर्य सामाजिक पत्रों में मिलते हैं। बम्बई प्रदेश में आर्य–शिक्षा–सभा नाम की एक सभा रजिस्टर्ड कराई गई जिसकी ओर से अन्य प्रकार की शिक्षाओं के साथ–साथ कन्याओं की शिक्षा का भी प्रबन्ध किया गया। कुछ समय पीछे बंगाल की राजधानी कलकत्ता में भी एक विशाल कन्या पाठशाला स्थापित हुई जो निरन्तर उन्नति करती हुई एक शानदार संस्था के रूप में परिणत हो गई। पंजाब के कन्या महाविद्यालय के बनने के पश्चात् स्त्री–शिक्षा की मानों बाढ़–सी आ गई। प्रायः हरेक समाज के साथ कन्या पाठशालाये ंतो खुली हीं, अनेक स्थानों पर विधवा–आश्रम और अनाथ–कन्या–आश्रम भी स्थापित हुए। पंजाब के डी.ए.वी. स्कूल और गुरूकुल या कन्या विद्यालय दलों में मानों होड़–सी लग गई। कालिज विभाग के लोग स्कूल खोलने में और महात्मा मुंशी राम पार्टी के लोग कन्याओं की शिक्षा का प्रबन्ध करने में जी–जान से लग गए। इस विवरण से अनुमान किया जा सकता है कि महर्षि दयानन्द और आर्यसमाज ने दलित कन्याओं सहित सभी स्त्रियों की शिक्षा में सर्वाधिक कार्य किया है।**

स्वामी दयानन्द जी ने माता–पिता–आचार्य को सभी सन्तानों व बालक–बालिकाओं का पूज्य माना है। तीनों में माता का स्थान प्रथम स्थान पर है। यह स्वामीजी की मातृशक्ति व स्त्री जाति के प्रति श्रद्धा व आदर भाव को प्रदर्शित करता है। इसका परिचय उन्हीं के द्वारा देश व समाज को मिला। स्थिति यहां भी यही है कि दलित वा अन्य सभी मातायें इसमें सम्मिलित हैं। महर्षि दयानन्द जी को इस बात का भी श्रेय है कि महर्षि दयानन्द ने महर्षि मनु के प्रसिद्ध श्लोक **"यत्र**

नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता। यत्रैतास्तु न पूज्यन्ते सर्वास्तत्राफलाः क्रियाः।'' सहित अनेक श्लोकों को उद्धृत किया है जिसमें दलित स्त्रियां भी सम्मिलित हैं। महर्षि मनु की रचना इन 6 श्लोको के महर्षि दयानन्द कृत अर्थ उनके नारियों के प्रति दृष्टिकोण को प्रदर्शित करने के लिए प्रस्तुत हैं। उन्होंने लिखा है–**'स्त्री की प्रसन्नता में सब कुल प्रसन्न होता है और उसकी अप्रसन्नता में सब अप्रसन्न अर्थात् दुःखदायक हो जाता है। 1। पिता, भाई, पति और देवर इनको सत्कारपूर्वक भूषणादि से प्रसन्न रखें जिनको बहुत कल्याण की इच्छा हो, वे ऐसा करें।2। जिस घर में स्त्रियों का सत्कार होता है, उसमें विद्यायुक्त पुरुष होके देवसंज्ञा धरा के, आनन्द से क्रीड़ा करते हैं और जिस घर में स्त्रियों का सत्कार नहीं होता, वहां सब क्रिया निष्फल हो जाती है।3। जिस घर वा कुल में स्त्री लोग शोकातुर होकर दुःख पाती हैं, वह कुल शीघ्र नष्ट भ्रष्ट हो जाता है और जिस घर वा कुल में स्त्री लोग आनन्द से, उत्साह और प्रसन्नता में भरी हुई रहती हैं, वह कुल सर्वदा बढ़ता रहता है।4। इस लिए ऐश्वर्य की कामना करने वाले मनुष्यों को योग्य है कि सत्कार और उत्सव के समय में भूषण, वस्त्र और भोजनादि से स्त्रियों का नित्यप्रति सत्कार करें।5। स्त्री को योग्य है कि अति प्रसन्नता से घर के कामों में चतुराईयुक्त सब पदार्थों के उत्तम संस्कार, घर की शुद्धि रखे और व्यय में अत्यन्त उदार सदा न रहे अर्थात् सब चीजें पवित्र और पाक इस प्रकार बनावे जो औषधरूप होकर शरीर वा आत्मा में रोग को न आने देवे। जो–जो व्यय हो, उसका हिसाब यथावत् रखकर, पति आदि को सुना दिया करे। घर के नौकर–चाकरों से यथायोग्य काम लेवे। घर के किसी काम को बिगड़ने न देवे। 6।** उत्तम स्त्री नाना प्रकार के रत्न, सत्य, पवित्रता, श्रेष्ठभाषण और नाना प्रकार की शिल्पविद्या अर्थात् कारीगरी सब देश व स्नानों तथा सब मनुष्यों से ग्रहण करे। महर्षि दयानन्द एक छोटी बच्ची का भी आदर किया करते थे। एक बार वह कई लोगों के साथ कहीं जा रहे थे। रास्ते में एक छोटी बच्ची वस्त्रहीन खेल रही थी। उसे कन्या को देखकर स्वामीजी ने अपना मुख व आंखे नीचे झुका ली। साथियों के पूछने पर उन्होंने कहा कि देखते नहीं, सामने मातृ शक्ति खड़ी है। **एक उदाहरण और है जिसमें एक वृद्धा स्त्री ने स्वामीजी से भिक्षा मांगी। उसके शब्द सुनकर स्वामीजी का हृदय द्रवित हो गया। वह बोले ''कितने दुःख की बात है कि आर्यावर्त्त की एक वृद्धा माता को भिक्षा मांगनी पड़ रही है। इसे यह भी नहीं मालूम कि वह जिससे भिक्षा मांग रही है, वह खुद दूसरों से मांग कर खाता है।''** यह दोनों उदाहरण महर्षि दयानन्द जी के स्त्री जाति के प्रति सम्मान की भावना को प्रदर्शित करते हैं।

महर्षि दयानन्द जी के दलित प्रेम व उनके प्रति आदर के दो उदाहरण और दे रहे हैं। यह घटना 25 जुलाई 1878 से 16 जनवरी, 1878 के उनके रूड़की प्रवास में घटी थी। महर्षि दयानन्द जी के एक जीवनीकार मास्टर लक्ष्मण आर्य जी के शब्दों में ही इसे उद्धृत कर रहे हैं–**'दलितों से स्वामी जी का स्नेह–सफरमैना की पल्टन का एक मजहबी सिख (दलित वर्ग के सिख को मजहबी सिख कहते हैं) जो श्वेत वस्त्र पहने हुए था तथा सभा में बहुत सावधानी से बैठा हुआ स्वामी जी की प्रत्येक बात को दत्तचित्त होकर सुन रहा था, कि अकस्मात् उसी समय छावनी का पोस्टमैन मुनीर खां स्वामी जी की डाक लेकर आया। वह पोस्टमैन उस मजहबी सिख को देखकर शोर मचाने लगा। यहां तक कि वह उसे मारने पर उतारू हो गया तथा चिल्लाकर कहा–रे मनहूस नापाक (गन्दे अशुभ) तू ऐसे महान् पुरुष तथा युग प्रसिद्ध व्यक्तितत्व की सेवा में इतनी अशिष्टता से आकर बैठ गया है। तूने अपनी जाति की उन्हें जानकारी नहीं दी। उस समय पता करने पर ज्ञात हुआ कि वह मजहबी सिख था। वह बहुत लज्जित होकर पृथक् जा बैठा। मुनीरखां ने प्रयास किया कि उसे निकाल दिया जाए। तब स्वामीजी ने अत्यन्त कोमलता व सौम्यता से कहा निःसन्देह उसके यहां बैठकर उपदेश सुनने में कोई हानि नहीं और उस पर कोई आपत्ति नहीं करनी चाहिए। तिरस्कृत किये गये उस व्यक्ति ने नयनों में अश्रु भरकर तथा हाथ जोड़कर कहा कि मैंने किसी को कुछ हानि नहीं पहुंचाई। सबसे पीछे जूतियों के स्थान पर पृथक् बैठा हूं। स्वामीजी ने डाकिए को कहा कि इतना कठोर व्यवहार तुम्हारे लिए अनुचित है और समझाया कि परमेश्वर की सृष्टि में सब मनुष्य समान हैं। उस दलित को कहा तुम नित्यप्रति आकर यहां उपदेश सुनो। तुमको यहां कोई घृणा की दृष्टि से नहीं देखता। मुसलमानों के निकट भले ही तुम कैसे हो। स्वामीजी के ऐसा कहने से वह अत्यन्त प्रसन्न हुआ अैर फिर प्रतिदिन व्याख्यान सुनने आता रहा।'**

पण्डित चमूपति द्वारा लिखित स्वामी दयानन्द जी के जीवन का छुआछूत विषयक एक अन्य उदाहरण भी प्रस्तुत है–**'स्वामी जी अनूपशहर में उपदेश दे रहे थे। इतने में उमेदा नाई भोजन का थाल लाया। स्वामी जी ने प्रेमपूर्वक सभा में ही भोजन करने लगे। सभा में कुछ ब्राह्मण बैठे थे। उन्होंने शोर मचा दिया कि–''यह क्या? नाई भ्रष्ट है। उसके यहां का भोजन संन्यासी को नहीं करना चाहिए।'' स्वामी हंसे और कहा, ''रोटी तो गेहूं की है। नाई का तो केवल प्रेम–भाव है। शुद्ध पवित्र भोजन चाहे कोई लाए, खा लेना चाहिये।''** पं. चमूपति जी लिखित ही छुआछूत विषयक एक अन्य घटना प्रस्तुत है–**'बम्बई में स्वामी जी के डेरे पर एक बंगाली आया। बातचीत करते–करते उसने पानी मांगा। बंगाली की दाढ़ी लम्बी थी। भक्तों ने समझा, कोई मुसलमान है। उन्होंने उसे गिलास देने की जगह पत्तों के दोनों में पानी दिया। स्वामी जी भड़क उठे और भक्तों को डांटकर कहा, ''कोई किसी जाति का हो, उसका यह अनादर क्यों करो कि गिलास तक न दो ?। यही तो कारण है कि इस जाति ने अपने में से लाखों–करोड़ों भाई–बहन निकाल तो दिए हैं, परन्तु अपने में मिलाया एक मनुष्य भी नहीं।''** (इस घटना पर पं. चमूपति की टिप्पणी–मनुष्य से छिःछिः करने वाले

स्वयं छिःछिः किये जाने के योग्य हैं। आदर से पराये अपने बनते हैं, निरादर से अपने पराये)। एक अन्य प्रश्नोत्तर भी पं. चमूपति जी ने **'हमारे स्वामी'** नामी अपनी पुस्तक में दिया है। वह लिखते हैं, **'भक्त–आपको जन्म से नीच कहते हैं। स्वामीजी–मैं भी तो यही कहता हूं कि जन्म से सब नीच हैं। जिसने पढ़ा–पढ़ाया वह ब्राह्मण हो गया, जो धर्म के लिए लड़ा वह क्षत्रिय हुआ, और जिसने व्यापार या खेतों का काम किया वह वैश्य हुआ, नहीं तो शूद्र है। मैंने ब्राह्मण के यहां जन्म लिया था। ब्राह्मण के बेटे को जन्म से नीच माना तो मेरे ही सिद्धान्त पर आए। मुझे ये सारी बातें सुनकर प्रसन्नता हो रही है। इस प्रकार के दुर्वचनों के भी स्वामीजी अच्छे अर्थ लेते रहे और क्रोध में न आए।'** पाठक इन घटनाओं से स्वामीजी का दलितों के प्रति प्रेममय दृष्टिकोण, धारणा व विचारों का ज्ञान कर सकते हैं।

वेद सृष्टि के आरम्भ में चार ऋषियों को परमात्मा प्रदत्त ज्ञान है। चारों वेदों के लगभग बीस हजार पांच सौ मन्त्रों के अर्थ के साक्षात्कर्त्ता को ऋषि व ऋषिका कहते हैं। वेदों में कुल 24 ऋषिकायें हैं जिन्होंने 223 मन्त्रों का साक्षात्कार कर इन मन्त्रों के अर्थों का प्रचार किया। इससे वैदिक काल में स्त्रियों का वैदिक ज्ञान सम्पन्न होना व ऋषिका का गौरवमय स्थान प्राप्त करना सिद्ध होता है। वेद मन्त्रों की साक्षात्कर्ता कुछ ऋषिकायें सवित्री, रोमशा, सरमा, सिकता, उर्वशी, अपाला, घोषा आदि हैं। रामायण में माता सीता का नाम आता है। उन्हें वैदेहि इस लिए कहा जाता है कि वह चारों वेदों की विदुषी थीं। जिस प्रकार महर्षि दयानन्द ने अपने समय में दलितों वा शूद्रों की दयनीय स्थिति को देखकर उनका विरोध किया और वेदों से इनके समाधान प्रस्तुत किये इससे अनुमान किया जा सकता है कि वैदिक काल में स्वामी दयानन्द के समान व अधिक ज्ञान सम्पन्न ऋषियों के होते हुए समाज में अज्ञान पर आधारित किसी सामाजिक व्यवस्था के अस्तित्व व प्रचलन में आना सम्भव ही नहीं था। अतः अनुमान से यह सिद्ध है कि मध्यकाल में जन्मना जाति के अस्तित्व में आने के बाद ही चतुर्थ वर्ण के स्त्री पुरूषों की सामाजिक स्थिति अवनत हुई जिसका कारण वेदों के ज्ञान का अप्रचार सहित समाज के प्रभावशाली वेदज्ञान रहित जन्मना ब्राह्मणों का अज्ञान व स्वार्थ भाव मुख्य था। मनुष्य के जीवन का उद्देश्य धर्म, अर्थ, काम व मोक्ष की प्राप्ति है। यह केवल वैदिक जीवन पद्धति से ही सम्भव है। अतः समाज के प्रत्येक स्त्री व पुरूष को जीवन का लक्ष्य प्राप्त करने के लिए वैदिक जीवन पद्धति की शरण में आने के अतिरिक्त कोई विकल्प नहीं है। भोग से रोग व अकाल मृत्यु होने के साथ परजन्म में पशु–पक्षी आदि निम्न योनियों में जाना होता है जो कि किसी के लिए भी वांछनीय नहीं है।

एक अन्य महत्वपूर्ण प्रसंग भी पाठकों के ज्ञानार्थ प्रस्तुत है। यह उल्लेख कर दें कि आर्य विद्वान श्री मनसाराम वैदिकतोप वैश्य वर्ण के थे। वह काशी में पढ़े और संस्कृत विद्या पूरी कर लेने के बाद उन्होंने उन्हें पण्डित की उपाधि प्रदान करने का आग्रह किया। जब वह नहीं माने तो उन्होंने चुनौती दी कि वह कोई भी परीक्षा देने को तैयार है। बाद में मजबूर होकर काशी की विद्वतमण्डली को उन्हें पण्डित की उपाधि देनी पड़ी। इतिहास की यह अपने प्रकार की पहली घटना है। यह उल्लेखनीय है कि आपने अनेक ग्रन्थ लिखे जिनमें एक वर्णव्यवस्था पर भी है जिसमें वैदिक व्यवस्था का अनेक प्रमाणों व तर्कों से समर्थन किया गया है। उनके दो अन्य प्रमुख ग्रन्थ हैं पौराणिक पोल प्रकाश और पौराणिक पोप पर वैदिक तोप। यह दोनों ग्रन्थ पठनीय है।

स्वामी दयानन्द जी ने सत्यार्थप्रकाश में अपने जो विचार व सिद्धान्त दिये हैं तथा अपने आचरण व क्रियात्मक जीवन में जो आदर्श प्रस्तुत किया, उससे सामाजिक विषमता समाप्त करने के क्षेत्र में अपूर्व क्रान्ति हुई है। यह दुःख की बात है कि आज भी पौराणिक जगत से जन्मना जातिवाद, ऊंच–नीच, छुआछूत, अगड़े–पिछड़े जैसी भावनायें व व्यवहार पूर्णतः समाप्त नहीं हुआ है। पौराणिक विद्वानों को चाहिये कि वह निरर्थक जन्मना जातिवाद पर अपना दृष्टिकोण स्पष्ट करें और वैदिक मान्यताओं के अनुसार उसका परिष्कार करें। आर्यसमाज को भी लेखों व प्रचार के माध्यम से जन्मना जातिवाद व छुआछूत के पूर्ण निर्मूलन के लिए अभियान चलाना चाहिये। वेद पौराणिकों व आर्यसमाजियों दोनों के लिए स्वतः प्रमाण हैं। इस कारण महर्षि दयानन्द ने वर्णव्यवस्था का वेद सम्मत स्वरूप प्रस्तुत किया और वेद विरूद्ध जन्मना जातिवाद व अस्पर्शयता आदि का विरोध किया। बुद्धि व तर्क की कसौटी पर भी आर्यसमाज ने जन्मना जातिवाद वह अस्पर्शयता आदि कुरीतियों को अनुचित, अव्यवहारिक एवं अमानवीय सिद्ध किया है। वेदों से अनुप्राणित महर्षि दयानन्द के दलितोद्धार विषयक विचार हिन्दू समाज के लिए संजीवटी बूटी के समान सिद्ध हुए हैं। आईये, महर्षि दयानन्द के जीवन और उनके कार्यों सहित उनके सत्यार्थप्रकाश आदि सभी ग्रन्थों का अध्ययन कर अपने जीवन से रूढ़िवादी मानसिकता को हटाकर प्रगतिशील विचारधारा का अनुगामी बनकर देश व समाज को नया आधुनिक स्वरूप प्रदान करें।

–मनमोहन कुमार आर्य
पताः 196 चुक्खूवाला–2
देहरादून–248001
फोनः09412985121